REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.7631(UIF)
VOLUME - 10 | ISSUE - 10 | JULY - 2021

आपदा रिपोर्टिंग की चुनौतियाँ और भारतीय मीडिया

(केदारनाथ आपदा, वर्ष २०१३ की रिपोर्टिंग के विशेष सन्दर्भ में)

डॉ.सुशील उपाध्याय[1] , डॉ. सुप्रिया रतूड़ी[2]
[1] प्राचार्य, चमनलाल महाविद्यालय, लंढौरा, हरिद्वार.
[2] स्वतंत्र पत्रकार, देहरादून.

सारांश -

भारतीय मीडिया के अधिकांश हिस्से में आपदा रिपोर्टिंग को समुचित गम्भीरता से नहीं लिया जा रहा है। इक्का-दुक्का को छोड़ दें तो किसी भी मीडिया संस्थान में आपदा रिपोर्टिंग रूटीन बीट के रूप में निर्धारित नहीं है। यह कहीं से भी उचित नहीं जान पड़ता, क्योंकि आपदा रिपोर्टिंग पूर्णतः अलग जानकारी की मांग करती है। भारत के विपरीत पश्चिमी देशों में पहले से ही इस बारे में तर्कपूर्ण ढंग से विचार किया जाता रहा है।

आपदाओं के समय मीडिया से उम्मीद की जाती है कि संबंधित पक्षों के जरिए सही सूचना दे। पश्चिम के विशेषज्ञों ने इस बारे में इसलिए भी अधिक विचार किया, क्योंकि वहां मीडिया के क्षेत्र में भी काफी प्रगति हो चुकी है और सामुदायिक सूचना के लिए मीडिया का सफलतापूर्वक प्रयोग हो रहा है। महसूस किया गया कि आपदा के समय मीडिया जीवन-संचार रेखा की तरह काम करता है। सूचना देने के साथ मीडिया आपदा प्रबंधन में भी सहयोगी हो सकता है। आपदा के समय राहत में जुटी सरकारी और स्वयंसेवी संस्थाओं को उस समय काफी आसानी हो सकती है, जब मीडिया के जरिए उन्हें सटीक सूचनाएं उपलब्ध हो सकें। अब प्रश्न यह है कि क्या वर्ष २०१३ की उत्तराखण्ड आपदा के समय मीडिया ने अपनी भूमिका का सही प्रकार से निर्वहन किया था ?

मुख्य शब्द – आपदा, मीडिया, केदारनाथ, उत्तराखंड, रिपोर्टिंग

वास्तविकता यह है कि आपदा से पूर्व, आपदा के समय और उसके बाद भी मीडिया की अहम भूमिका होती है। उसे अपना यह दायित्व पूरा करना होता है। और उसका दायित्व एक सक्रिय सहभागिता से ही तय होता है। हमारे यहां मीडिया के इस दायित्व के बारे में भारतीय आपदा प्रबंधन कांग्रेस ने भी विचार किया है।

"The role of media, both print and electronic, in informing the people and the authorities during emergencies thus, becomes critical, especially the ways in which media can play a vital role in public

awareness and preparedness through educating the public about disasters; warning of hazards; gathering and transmitting information about affected areas; alerting government officials, helping relief organizations and the public towards specific needs; and even in facilitating discussions about disaster preparedness and response. During any emergency, people seek up-to-date, reliable and detailed information."[1]

मीडिया के लिए उत्तराखंड की कठिन राह -

उत्तराखंड आपदा के समय भी मीडिया का दायित्व बहुत कठिन था। इस आपदा में हजारों लोगों की जान गई। इस आपदा की विशालता का अनुमान इन तथ्यों से भी लगाया जा सकता है-

"केदारनाथ आपदा में 4400 से अधिक लोग मारे गए या लापता हो गए।
4200 से अधिक गांवों का पूरी तरह से संपर्क टूट गया।
2141 भवन पूरी तरह से नष्ट हो गए।
जलप्रलय में 1309 हेक्टेयर कृषि भूमि बह गई ।
सेना व अर्द्ध सैनिक बलों ने 90 हजार लोगों को रेस्क्यू किया।
30 हजार लोग पुलिस ने बचाए।
55 नरकंकाल सर्च ऑपरेशन में खोजे गए।
991 स्थानीय लोग अलग-अलग जगहों पर मारे गए।
11,000 से अधिक मवेशी बह गए या मलबे में दब गए।
2,141 भवनों का नामों-निशान मिट गया।
100 से ज्यादा बड़े व छोटे होटल ध्वस्त हो गए।
09 राष्ट्रीय व 35 स्टेट हाईवे क्षतिग्रस्त हो गए।
2385 सड़कों को भारी नुकसान पहुंचा।
86 मोटर पुल और 172 बड़े व छोटे पुल बह गए।"[2]

वास्तव में लोग मौत से सीधे मुकाबला कर रहे थे। उन्हें हिम्मत बंधाने के साथ उनके परिवारों के धैर्य और विपदा का भी ध्यान रखना था। "रात के प्राइम टाइम शो के लिए जब हमने रिपोर्ट लिखनी शुरू की तो हमारे पास हैरान करने वाली कहानियां थीं। अंधेरा होते ही हमारी मुलाकात एक गुजराती परिवार से हुई जो केदारनाथ से लौट रहा था। वह अपने मरे हुए बेटे को केदारनाथ और रामबाड़ा के बीच छोड़कर आये थे।"[3]

इस तरह के कठिन असाइनमेंट्स में नौकरी के साथ मानवीय पक्ष भी हावी हो जाता है। प्रभावित लोगों तक राहत कैसे पहुंचे, यह देखना भी मीडिया के दायित्व में शामिल हो जाता है। आपदा के समय ही नहीं, बल्कि उसके पहले और बाद में भी मीडिया महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आपदा के दौरान तो यह दायित्व और अधिक बढ़ जाता है। **"**आपदा के समय मीडिया बहुत अहम भूमिका निभा सकता है। इसके सहयोग के बिना लोगों को पूरी तरह जागरूक नहीं किया जा सकता। आपदा के समय मीडिया कर्मियों का सामाजिक व राष्ट्रीय दायित्व और भी बढ़ जाता है। संकटकाल, दैवी आपदा व दुर्घटना के समय मीडिया की भूमिका और महत्वपूर्ण हो जाती है। संकटकालीन परिस्थिति में त्वरित गति से सही सूचनाओं के प्रवाह से जनता के बीच अफवाह को रोका जा सकता है।**"**[4]

आपदा के समय मीडिया की इस सकारात्मक भूमिका के विपरीत उसका नकारात्मक पहलू भी है। हमारे यहां भी देखने में आता है कि संकट के समय प्रभावितों और उनके बीच राहत के लिए काम करने वाली एजेंसियों को सचेत करने

की जगह मीडिया राजनीतिक खेमेबाजी करने लगता है। सरकार और प्रतिपक्ष के बीच एक दूसरे के प्रति आरोप-प्रत्यारोप में शरीक होने की जगह मीडिया अपने मूल काम में लगा रहे तो पीड़ितों के हक में बेहतर होता है। आपदा के पूर्व भी संबंधित लोगों और एजेंसियों को सतर्क करने में मीडिया का अहम दायित्व है। इस बारे में पर्यारणविदों ने भी सचेत किया है। "आपदा को अगर हम रोक नहीं रोक सकते तो उसकी मारक क्षमता को कम तो कर ही सकते हैं। मीडिया का इस काम में अहम रोल हो सकता है। केदारनाथ में क्या हुआ इसकी रिपोर्टिंग करने में मीडिया का अहम रोल रहा, लेकिन आपदा की कई वजहों और बारीकियों को मीडिया को बड़े स्तर और लगातार दिखाना होगा। जो असली मुद्दे हैं उन पर ध्यान केंद्रित करना होगा। मिसाल के तौर पर जैसे आज कहा जा रहा है कि वार्निंग सिस्टम (चेतावनी देने की मैकेनिज्म) बनाया जाना चाहिए, लेकिन वह किस रूप में किया जायेगा यह एक महत्वपूर्ण सवाल है।[5]"

वार्निंग सिस्टम बनाने का सवाल मीडिया उठाता ही रहता है। स्थानीय लोगों के साथ देश की अंग्रेजी पत्रकारिता ने भी इस पर विचार किया है। "..Yet, if a warning system had been in place, such as radars and climate prediction instrumentation, some of the damage could have been mitigated."[6]

पूर्व चेतावनी तकनीक की व्यवस्था तो जरूरी है ही, स्थानीय पारिस्थिकी की अवहेलना बड़ा मुद्दा है। आपदा और खासकर केदारघाटी के जलप्लावन जैसे हालात पर विचार करते समय सिर्फ बाढ़ का ध्यान रखना ठीक नहीं होगा। असल मुद्दा पर्यावरणीय संतुलन को बनाये रखने की कोशिश है। "उत्तराखंड हिमालय की गोद में बसा है, लेकिन उसी हिमालय में ग्लेशियर, बुग्याल, नदियां, झरने, जंगल और पूरा संवेदनशील इकोसिस्टम भी है। इस बात पर बहस चलती रहेगी कि विकास का मॉडल क्या होना चाहिए, लेकिन हिमालय के बचे रहने के लिए कुछ बेहद काबिल, परंतु थोड़े आलसी लोगों के ज्यादा सक्रिय होने की जरूरत है।"[7]

हाल जानने की उत्सुकता -

असल में, लोगों को संकट के समय में समाचारों की सबसे ज्यादा जरूरत होती है। इन समाचारों के जरिये ही लोग 'अज्ञात के भय' से बेहतर तरीके से निपट पाते हैं। यही कारण है कि संकट जितना बड़ा होता है, समाचारों की मांग उतनी ही ज्यादा होती है। समय पर सही सुचना मिलने से जहां एक ओर संकट में फंसे और प्रभावित लोगों को उससे निपटने और उसका सामना करने में आसानी होती है, वहीँ दूसरी ओर, बाकी लोगों के लिए यह एक सबक और खुद को ऐसे किसी भी संकट का सामना करने के लिए तैयार करना होता है। जाहिर है कि ऐसे संकट के समय न्यूज मीडिया की जिम्मेदारी बहुत ज्यादा बढ़ जाती है, क्योंकि उससे उसके दर्शकों-श्रोताओं-पाठकों की अपेक्षाएं भी बहुत ज्यादा बढ़ जाती हैं।

देश में आपदा के पूर्व आम लोगों और संबंधित एजेंसियों को सचेत करने अथवा प्रशिक्षित करने की व्यवस्था नहीं बन पाई है। मीडिया के प्रभाव क्षेत्र में लगातार विस्तार हो रहा है, फिर भी अमेरिका जैसे देश के मुकाबले आपदा के समय इसकी भूमिका काफी कम है। "In certain circumstances the news media provide an important disaster management public service, especially in broadcasting alerts, warnings, and advisories.."[8]

यह सच है कि उत्तराखंड के पहाड़ों में आपदाएं हर साल होती हैं । इसी के साथ सच यह भी है कि ये आपदाएं खबर इसलिए नहीं बन पातीं क्योंकि इनके शिकार दूरदराज के क्षेत्रों में रहने वाले लोग बनते हैं। चुन्नी-मंगोली गांव भी ऐसी ही जगह थी जहां 2013 के पहले भी एक दुर्घटना हुई थी। केदारनाथ आपदा के पहले 2012 के भूकंप में चुन्नी-मंगोली में ही एक साथ 12 लोगों की मौत हो गई थी। "एक- दूसरे से सटे इन दो गांवों में अब भी टूटे पहाड़ का मलबा पड़ा था। पिछले साल जब भूस्खलन हुआ तो कई लोग सोते हुए ही पहाड़ के नीचे दफन हो गये थे। आपदा रात के वक्त के आयी थी। पचपन साल के पूरन इन गांवों में जब मुझे घुमा रहे थे तो कहीं से आवाज आई कि टीवी वाले आये हैं ।...मैंने सोचा कि देश

के कई हिस्सों में अब भी सरकार से ज्यादा भरोसा लोगों को मीडिया पर है,लेकिन क्या हम इस उम्मीद पर खरे उतरे हैं।"[9]

जहां मीडिया का इतना अधिक महत्व हो, उस आपदा के समय स्वयं मीडिया की ओर से इस पर गम्भीर नहीं होना चिन्ता का विषय है। हमारा देश कई तरह की छोटी-बड़ी प्राकृतिक आपदाओं से जूझता ही रहता है। पिछले डेढ़-दो दशकों में भारत में कच्छ (गुजरात), लातूर (महाराष्ट्र) और टिहरी-गढ़वाल (उत्तराखंड) में बड़े भूकंप आये। तमिलनाडु में सुनामी की यादें अब भी ताजा हैं। उड़ीसा-आंध्र प्रदेश में चक्रवात नई बात नहीं रही। इसके अलावा बाढ़, भू-स्खलन, सूखा और बादल फटने की आपदाएं आम हैं। इसके बावजूद हैरानी की बात है कि "भारतीय न्यूज मीडिया खासकर न्यूज चैनलों में प्राकृतिक आपदाओं को रिपोर्ट करने की तमीज नहीं बनी है। उनमें वह तैयारी, विशेषज्ञता और संवेदनशीलता नहीं दिखाई पड़ती है जो कि इतने अनुभवों के बाद आ जानी चाहिए थी।"[10]

विगत दिनों में आपदा रिपोर्टिंग में लोगों की रुचि इसलिए भी बढ़ी है क्योंकि वे "अनहोनी के डर से परेशान रहते हैं। लोगों को लगता है कि अगले कुछ समय में उनके साथ भी कुछ गलत हो सकता है। ऐसे में, पहले से ही बचाव के उपाय करने होते हैं। विडम्बना यह है कि मीडिया ताजा हालात बताने की जगह 'मौके पर पहले पहुंचने' की आपाधापी में रहता है। ध्यान रखना होगा कि लोग यह जानना चाहते हैं कि तात्कालिक आपदा और कितना कहर बरपा सकती है। इसका प्रभाव क्षेत्र और कहां तक बढ़ सकता है।"[11]

केदारनाथ आपदा के मामले में जहां लोग वस्तुस्थिति के बारे में जानना चाहते थे, वहीं बड़ी संख्या में बाहर से आये पत्रकार अतिरंजित रिपोर्ट कर रहे थे। "दिल्ली से गई एक महिला पत्रकार को एक बुजुर्ग ने नसीहत देते हुए कहा- बेटी तुम यहां से क्या लेकर जाओगी, मैं नहीं जानता, लेकिन वही दिखाना जो तुम्हें नजर आए। मीडिया पत्रकारों से हम यही उम्मीद करते हैं कि वह सच ही दिखाएंगे।"[12]

अफवाह रोकना जरूरी -

आपदा रिपोर्टिंग में सच्चाई का होना बेहद जरूरी है। अफवाह रोकने के मामले में तकनीक की मदद भी ली जा सकती है. तकनीक के जरिये मीडिया को सही स्थिति और तथ्य हासिल हो सकते हैं."अंतरिक्ष विज्ञान ने इस दिशा में बहुत काम किया है। उपग्रहों की मदद से जाना जा सकता है कि **हरिकेन, टायफून, बवंडर, चक्रवात** की क्या स्थिति रहेगी।"[13]

केदारनाथ आपदा के समय भी अफवाहों का आलम यह था कि कई चैनल यह बताते रहे कि कुछ स्थानीय लोग विपदा में फंसे यात्रियों को लूट रहे हैं। इस तरह की इक्का-दुक्का घटना से इनकार नहीं किया जाता। फिर भी एक तथ्य यह है कि हर ओर ऐसा ही नजारा नहीं था। कुछ घटनाओं के आधार पर पूरा परिदृश्य रखना कहीं से भी तर्कसंगत नहीं हो सकता। कहा गया कि पानी के बोतल के 15 रुपये की जगह 100 रुपये लिये जा रहे हैं। मीडिया ने ऐसा बताते समय यह ध्यान नहीं रखा कि इस तरह की अतिरंजित जानकारियों से देशभर में रह रहे उत्तराखंडवासियों के खिलाफ आक्रोश भड़क सकता था।

मीडिया की ओर से यह बताना भी जरूरी था कि किन स्थानीय लोगों ने परेशानी में होते हुए भी हजारों रुपये लगाकर पीड़ितों की मदद की। "आटा,चावल,दाल सब कुछ बहुत अधिक नहीं था। सड़के कटी थीं। हमें चिंता थी कि सरकारी मदद न जाने कब आये, लेकिन हम सबने तय किया कि इन लोगों के खाने की व्यवस्था गांव के लोग करेंगे और हर घर से चावल,आटा और दाल इकट्ठी की गई। सबने मदद की और दो दिनों तक हम लगातार आ रहे लोगों को शरण देते रहे और उन्हें खाना खिलाते रहे।"[14]

स्पष्ट है कि आम तौर पर चैनलों की रिपोर्ट में लोगों में जागरूकता फैलाने, उन्हें आश्वस्त करने और हौसला

रखने का मकसद काफी कम देखा गया। इसकी जगह कई चैनल लोगों को डराने और बेबसी का अहसास कराने में लगे रहे। वर्ष २०१५ में नेपाल भूकम्प में भी इसी तरह की सनसनीखेज रिपोर्टिंग की गई थी। "लगता नहीं कि इस तरह के अनुभवों से चैनलों ने कोई सबक सीखा है। नेपाल में भी वे वही गलतियां दोहराते नजर आये। उन्हें इसका खामियाजा भी चुकाना पड़ा। नेपाल में भारतीय मीडिया की बड़ी फजीहत हुई और वहां से उन्हें 'बड़े बेआबरू' होकर निकलना पड़ा। आखिर भारतीय न्यूज मीडिया, खासकर न्यूज चैनल एक ही तरह की गलतियां क्यों दोहरा रहे हैं? क्या यह एक गलती भर है या एक पैटर्न बनता जा रहा है?"[15]

आधी-अधूरी सच्चाई -

उत्तराखंड की त्रासदी का कारण बताने में भी कुछ ऐसा ही हुआ। टेलीविजन पर और अखबारों में नेता और विशेषज्ञ अपने-अपने ढंग से विश्लेषण करने में लगे रहे। यह समझने तक की कोशिश नहीं की गई कि सच्चाई क्या है। सामान्य तौर पर भौगोलिक और पर्यावरणीय स्थितियों को बताने में स्थानीय लोग अधिक उपयोगी हो सकते हैं। बताया गया कि केदारनाथ की घटना बादल फटने से हुई। पर्यावरणविद चंडी प्रसाद भट्ट के मुताबिक "जैसा कहा गया कि बादल फटा। बादल फटने के लिए एक सौ मिलीलीटर बारिश एक घंटे तक एक जगह पर केन्द्रित होनी चाहिए। तो उसे बादल फटना कह सकते हैं। भारी बारीश कहना फिर भी ठीक है। लेकिन यदि पत्रकार और वैज्ञानिक दोनों बादल फटना शब्द का इस्तेमाल कर रहे हैं तो कैसे कह रहे हैं? आपको कैसे पता, कि कितनी बारिश हुई? इसका सीधा अर्थ है आप भय पैदा करना चाहते हैं।?"[16]

वस्तुतः भारतीय चैनल आपदा का कारण बताने में भौगोलिक स्थितियों के विशेषज्ञों की मदद लेते तो बेहतर होता। यह ठीक है कि आपदा का मूल कारण अति वृष्टि थी, पर अचानक इतना अधिक पानी कैसे आ गया जो पहाड़ के मलबे को भी अपने साथ बहाता ले आया ? "अब तक की सारी कहानियां सुनी-सुनायी थीं या फिर उन लोगों की आपबीती थीं जो केदारनाथ के रास्ते में फंसे थे, लेकिन रवींद्र भट्ट ने हमें केदारनाथ मंदिर में हुई तबाही की पहली झलक दिखाई। अब तक यही कहा जा रहा था कि केदारनाथ में आई बाढ़ की वजह वासुकी ताल से आया पानी था, लेकिन राष्ट्रीय चैनल पर पहली बार हमने रवींद्र भट्ट के बयान के जरिये यह बताया कि केदारनाथ की तबाही वासुकी ताल के पानी से नहीं, बल्कि चौराबरी झील के टूटने से हुई।"[17]

ऐसा लगता है कि भारतीय न्यूज मीडिया, खासकर चैनलों ने प्राकृतिक आपदाओं को कवर करने के दौरान हुई अपनी पिछली गलतियों से भी कुछ नहीं सीखा है। इससे पहले कश्मीर घाटी में आई भारी बाढ़ की रिपोर्टिंग के दौरान भी न्यूज मीडिया, खासकर चैनलों ने ऐसी ही गलतियां की थीं। तब उन पर असंवेदनशील व्यवहार, कुछ खास क्षेत्रों पर ज्यादा जोर देने, सनसनीखेज और घबराहट पैदा करनेवाली रिपोर्टिंग के अलावा राहत और बचाव के कामों में जाने-अनजाने बाधा डालने के अलावा सेना के बचाव-राहत कार्यों के अतिरेकपूर्ण कवरेज या पीआर करने का आरोप लगा था। कश्मीर घाटी में चैनलों की इस तरह की असंतुलित और असंवेदनशील रिपोर्टिंग का खासा विरोध हुआ था।

केदारनाथ घाटी में आई भीषण बाढ़ के कवरेज के दौरान चैनलों ने 'एक्सक्लूसिव' के नाम पर खूब आपाधापी मचाई थी। आपाधापी ऐसी कि सरकारी हेलीकाप्टर्स से घटना स्थलों पर जाने के लिए मीडिया के दोनों ही हिस्सों, यानी प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया ने शोर मचाया। "पिथौरागढ़ में प्रिंट मीडिया के पत्रकारों ने कुमाऊं कमिश्नर की पत्रकार वार्ता का बहिष्कार कर दिया। इसके पीछे यह बात थी कि इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के पत्रकार हवाई यात्रा कर चुके थे और बेचारे प्रिंट वाले छूट गए थे। डीएम को जब पता चला तो उन्होंने मीडिया के लिए व्यवस्था की, इसके बाद पिथौरागढ़ के पत्रकार तो थे ही, उनके दोस्तों को भी हेली में घूमने का मौका मिला।"[18]

निष्कर्ष -

केदारनाथ आपदा को सामने रखकर देखें तो कई बार लगता है कि ज्यादातर चैनल लोगों के डर, लाचारी और बेचैनी को भुनाने की कोशिश कर रहे हैं। कुछ अपवादों को छोड़ कर कई चैनल तबाही के बारे में वस्तुनिष्ठ और तथ्यपूर्ण तरीके से खबरें नहीं दे पाए। उनकी रिपोर्ट में वैज्ञानिक कारणों को स्पष्ट नहीं किया गया। ऐसे चैनलों का जोर सनसनी, घबराहट और बेचैनी बढ़ाने पर ही बना रहा। यह सही है कि दुनिया भर के भौगोलिक आधार एक तरह के नहीं होते। इसलिए यह कहना भी उचित नहीं है कि उत्तराखंड आपदा के समय रिपोर्टिंग का कोई विशेष फार्मूला अपनाया जा सकता था। तो भी पश्चिमी देशों में आपदा रिपोर्टिंग के आधार पर बहुत कुछ काम हुआ है। आधार जमीन से जुड़े होते हैं और जमीन में थोड़े बदलाव की स्थिति में संसाधन भी उसी के अनुरूप अपनाये जा सकते हैं।

---

[1] Concept Note, Second India Disaster Management Congress (New Delhi, 4-6 November 2009)

[2] अलका त्यागी, अमर उजाला, https://www.amarujala.com/dehradun/kedarnath-disaster-eight-years, १३ जून, २०२१

[3] हृदयेश जोशीः बिना रास्ते का सफर (पुस्तक 'तुम चुप क्यों रहे केदार',आलेख प्रकाशन)

[4] आशीष वशिष्ठःआपदा का खोखला प्रबंधन (डेली न्यूज एक्टिविस्ट-01 सितम्बर,2014)

[5] चंडीप्रसाद भट्टः बोल व्यापारी तब क्या होगा (हृदयेश जोशी की पुस्तकः 'तुम चुप क्यों रहे केदार' से)

[6] C.R.Reddy:A Himalayan tragedy, The long- term Issues Exposed by the Uttarakhand floods need urgent attention (उत्तरपक्षः पुस्तकायोजन-एक)

[7] हृदयेश जोशीः अमरा देवी का दर्द (पुस्तकः तुम चुप क्यों रहे केदार)

[8] Media(compatibility mode)- Session 20-Federal Emergency Management Agency(FEMA)-17 SEP.1999

[9] हृदयेश जोशीः अमरा देवी का दर्द(पुस्तकः तुम चुप क्यों रहे केदार)

[10] आनन्द प्रधानःप्राकृतिक आपदा की रिपोर्टिंग, संवेदनशीलता और समझदारी नहीं, सनसनी और शोर ज्यादा (newswriters.in)

[11] प्रभात ओझाःआपदा रिपोर्टिंग-चुनौती और सावधानी का क्षेत्र (newswriters.in)

[12] Freelance reporters on facebook (मुद्दा/ नौकरी बचानी है हर कीमत पर)

[13] प्रभात ओझाःआपदा रिपोर्टिंग-चुनौती और सावधानी का क्षेत्र (newswriters.in)

[14] अगस्त्यमुनि के निकट डडोली गांववासियों की कहानी (हृदयेश जोशी की पुस्तक 'तुम चुप क्यों रहे केदार')

[15] आनन्द प्रधानःप्राकृतिक आपदा की रिपोर्टिंग,संवेदनशीलती और समझदारी नहीं, सनसनी और शोर ज्यादा (newswriters.in)

[16] आशीष कुमार 'अंशु'(visfot.com-26- 07-2013), उत्तराखंड आपदा की आपदाग्रस्त रिपोर्टिंग

[17] हृदयेश जोशीः बिना रास्ते का सफर (पुस्तक 'तुम चुप क्यों रहे केदार')

[18] जगत मर्तोलिया (उत्तराखंड आपदा का खूब मजा लिया पत्रकारों ने), शुक्रवार- वार्षिकी, 2014